ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-12 No.03 December 2020

तत्-सम' उपन्यास के सन्दर्भ में नारी की बदलती स्थिति

शालू जमोरिया पीएच०डी०, शोधछात्रा हिन्दी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय जम्मू। **जम्मू कश्मीर**

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नारी शिक्षा के कारण महिलाओं में अपने अस्तित्व और अपनी अस्मिता के प्रति जागरुकता उत्पन्न हुई। परिणामस्वरूप वे साहित्य के क्षेत्र में गतिशील हुई। अनेक महिला साहित्यकारों ने अपनी कहानियों व उपन्यासों के माध्यम से समसामयिक स्त्री सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नों एवं समस्याओं को अभिव्यक्ति प्रदान की और साथ ही नारी जीवन से सम्बन्धित आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक आयामों को दृष्टि में रखकर साहित्य की रचना की। पुरुष प्रधान समाज में नारी का अस्तित्व किसी वस्तु अथवा चीज के समान ही है। ''पिछले कुछ दशकों में नारी के प्रति अपराध एवं हिंसा की घटनाओं में काफी वृद्धि हुई है तथा यह समाज वैज्ञानिक, नीति-निर्धारकों, समाज सुधारकों व अन्य सभी के लिए एक गहन चिन्ता का बना हुआ है। यह सही भी है क्योंकि नारी को सुरक्षा व सुख प्रदान करने के बदले पुरुषों ने नारी को तिरस्कृत किया है, उसकी उपेक्षा की है, उसका अपमान व शोषण किया है तथा यहाँ तक कि उसके साथ अमानवीय हिंसात्मक व्यवहार भी किया है।'' धीरे-धीरे महिलाओं में अधिकारों के प्रति जागरुकता आ रही है और वे अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु आज भी प्रयासरत हैं। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से स्त्रियों पर हो रहे अत्याचारों के विरुद्ध आवाज भी उठाई। इन महिला साहित्यकारों में कुछ उल्लेखनीय नाम इस प्रकार हैं- कृष्णा सोबती, शशिप्रभा शास्त्री, मन्नु भण्डारी, मंजुल भगत, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, ममता कालिया, नासिरा शर्मा, मैत्रयी पुष्पा आदि। इस परम्परा में एक और महत्त्वपूर्ण नाम है- राजी सेठ।

राजी सेठ मनुष्य के अन्तर्जगत की लेखिका हैं। वे व्यक्ति के अंतस की गहराई में पैठकर, भीतर की उथल-पुथल को, पीड़ा को, व्यथा को कुशलतापूर्वक अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं। राजी सेठ किसी विशेष विचारधारा के तहत लेखन कार्य नहीं करती। उनका मानना है कि उनका लेखन अनायास है, भीतर की घुटन व तड़ की सहज अभिव्यक्ति है। व्यक्तिगत जीवन में राजी सेठ अस्मिता, स्वतंत्रता, समायोजन जैसे प्रश्नों से जूझ रही थीं। ऐसे ही प्रश्नों से जूझने और उनका समाधान ढूँढने की कोशिश का प्रमाण है उनका बहुचर्चित उपन्यास- 'तत्-सम'।

आज पूरी दुनिया में स्त्रीवाद का नारा गूंज रहा है। जेंडर बायस और जेंडर सेंसिटायजेशन आज बहस का मुद्दा बना हुआ है। साहित्य के क्षेत्र में भी स्त्रीवादी लेखन की बहुलता है। स्त्रीवादी लेखन में महिला साहित्यकारों की ही भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। परिवर्तन के इस दौर में महिला लेखन में स्त्री के परम्परागत रूप में धीरे-धीरे सुधार होने लगा और स्त्री एक नये स्वरूप के साथ उभरने लगी, जिसे स्त्री यथार्थ की संज्ञा दी जाने लगी। यह नया स्वरूप स्त्री के परम्परागत रूप को चुनौती देकर, सदियों से दमित व शोषित नारी में विद्रोह का स्वर बनकर उभरा। आर्थिक स्वतन्त्रता का इस नये स्वरूप को संवराने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। स्त्री जीवन के विभिन्न पहलु भिन्न-भिन्न आयामों में नजर आने लगे। अस्तित्ववादी चिन्तन, नारी की पीड़ा व कुण्ठा महिला उपन्यासकारों के पसंदीदा विषय बन गये। परन्तु राजी सेठ के तत्-सम उपन्यास के अध्ययन के बाद प्रतीत हुआ कि समस्या भले ही सदियों पुरानी हो, परन्तु विषयोन्वेषण एकदम नवीन है। तत्-सम उपन्यास स्त्री के अस्तित्ववादी चिन्तन को एक नया आयाम देता है।

''वैधव्य एवं विधवा विवाह एक ऐसी सामाजिक समस्या है जिसके समाधान का प्रश्न स्त्री-स्वातन्त्र्य और स्त्री-अस्मिता से जुड़ा हुआ है। स्त्री-स्वातन्त्र्य के नाम पर बहुत से सुधार हुए, नियम बने। समाज के स्थापित मूल्यों, संस्कारों एवं परम्पराओं के दायरे में इन नियमों को सामाजिक मान्यता भी मिली।'' तत्-सम उपन्यास के माध्यम से राजी सेठ स्त्री स्वायत्तता के मूल स्वरूप को समझने का पूर्ण प्रयास करती हैं। इस उपन्यास की मुख्य पात्र वसुधा है। दूसरे प्रमुख पात्र हैं विवेक तथा आनन्द। इन्हीं तीन पात्रों के इर्द-गिर्द पूरे उपन्यास की कथावस्तु विचरण करती है। तीनों को अपने स्वत्व तथा आत्मसम्पन्नता के लिए मानसिक संघर्ष से गुजरना पड़ता है। तीनों अलग-अलग तरह से परिस्थितियों से लड़ते हैं और उसके अनुसार फल या परिणाम के अधिकारी बनते हैं।

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-12 No.03 December 2020

विवेच्य उपन्यास व्यक्ति स्वातन्त्र्य, नारी स्वातन्त्र्य की दृष्टि को मध्य रखकर एक अत्यन्त बुद्धिमान व शिक्षित नारी के पुनर्विवाह के प्रश्न को आधुनिक जीवन-स्थितियों के अनुसार देखने व समझने का प्रयत्न है। यह प्रेमकथा भावुकता से अलग हटकर जीवन को प्रति समझौता सा प्रतीत होता है। ''गम्भीर मनःस्थितियों और तीव्र द्वन्द्व से निकलकर 'आनन्द' (तत्-सम में वसुधा आनन्द को प्राप्त करती है।) तक पहुँचने की एक लम्बी यात्रा वसुधा को तय करनी पड़ती हैं।'' वसुधा पति अथवा प्रेमी के रूप में ऐसा व्यक्ति चाहती है जो उसके अभाव को पूर्ण करे और पुरुष प्रधान समाज की प्रत्येक परिस्थिति में उसका साथ दे, उसकी ढाल बने। परन्तु अतीत में घटित घटनाओं की स्मृति उसे बेचैन कर देती है। पूर्व पति निखिल का स्मरण उसे अन्दर ही अन्दर झकझौरता रहता है। परिणामत् 'तत्-सम' उपन्यास की समस्या सामाजिक स्तर पर न होकर मानसिक स्तर पर है। क्योंकि सामाजिक स्तर के अनुसार वसुधा का पुनः विवाह होना चाहिए, यह भाई-भाभी, सम्बन्धी सभी का आग्रह है। किन्तु वसुधा की मानसिकता यह है कि वह अपने मृत पति निखिल के साथ बिताये अतीत को स्वयं से अलग नहीं कर सकती। एक्सीडेंट में निखिल की मृत्यु अवश्य हो जाती है, किन्तु उसकी स्मृति वसुधा के मन-मस्तिष्क से कभी मिट नहीं पाई। भारतीय सामाजिक स्थितियाँ वसुधा को निखिल से और भी गहरे जोड़ती चली जाती हैं। उसे कदम-कदम पर एहसास दिलाया जाता है कि पति के बिना पत्नी का अस्तित्व शून्य है। ''तुम्हारा होना मेरे लिए हर तरह से जरुरी था निखिल। तुम मेरा समाज भी थे, शील भी, मेरा आवरण भी।'' उसकी पीड़ा का बिन्दु यह है कि ''सार्थकता' और 'पुरुष' - यह दोनों ही चीज के नाम क्यों हैं स्त्री के जीवन में ? इतनी बड़ी जगह क्यों घेर ली है इस सम्बन्ध ने कि हर चीज की व्याख्या इस बिन्दु से ही होने लगे।'' वसुधा के पुनः विवाह को पूरा परिवार सहमत है लेकिन वसुधा का मन उसे दोबारा शादी करने की अनुमति नहीं देता है, वह भीतर ही भीतर टूट जाती है क्योंकि वह स्वयं को इस मानसिकता में डाल सकने में असमर्थ है। एक स्त्री क्यों समाज व परिवार के बनाये मानदण्डों पर ही चले, उसकी स्वयं की इच्छा भी तो मायने रखती है। क्या नारी में मन नाम की कोई चीज नहीं होती है? क्या वह आज भी सुशिक्षित होकर ऐसी ही औरत है जिसे जैसे चाहों उसी रूप-रंग में ढाल दो। वसुधा के भीतर इस स्थिति के प्रति विद्रोह का भाव जागृत होता है, ''यह जिन्दगी है या काठ का कोई शहतीर, जब जहाँ से चाहा काट दिया गया। एक टुकड़ा चिता में धधकने के लिए छोड़ दिया गया, दूसरा नयी इमारत की पहली चौखट में जड़ दिया गया।'' वसुधा के ऐसे ही अनेक कथन उपन्यास में नारी स्वातन्त्र्य और आधुनिक भारत के जाग्रत नारीत्व के द्योतक हैं। वसुधा की यह मानसिकता ही उसे रुढ़िवादी व पारम्परिक बनने से रोकती है। तभी तो वह परिवार द्वारा सुझाये गये विवेक को पति रूप में स्वीकार न कर आनन्द को अपना जीवन साथी चुनती है। ''सवाल यह नहीं है कि वसुधा विवेक को न पाकर आनन्द को पाती है, अपितु अहम् 'स्वतन्त्रता' से, स्वीकारती है; वह चाहे विवेक है या आनन्द सम्बन्ध उस पर थोपे नहीं जा सकते, उसकी विवशता में उन्हें वसुधा को ओढ़ाया नहीं जा सकता।''

वसुधा भारतीय समाज के स्त्री और पुरुष के लिए बनाये गये दुहरे मानदण्डों पर कटाक्ष करती है। हमारा समाज पुरुष के बिना स्त्री को कमजोर समझता है। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री को पुरुष के समक्ष किसी भी निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करने दिया जाता। उसका अस्तित्व पुरुष के साथ ही माना जाता है। उपन्यास में वसुधा पुरुष के बिना स्त्री की स्थिति पर आनन्द से अपना आक्रोश व्यक्त करती है, ''क्योंकि औरत की दूसरी कोई हैसियत मानी ही नहीं जाती। पुरुष के साथ या पुरुष के बिना। दोनों स्थितियों में अपनी तयशुदा अलामते हैं।'' भारतीय सामाजिक परिवेश अथवा पुरुषवादी मानसिकता को दर्शाता आनन्द का कथन है कि ''यहाँ की स्त्रियाँ पुरुष के कामकाजी पक्ष की उतनी एक्टिव भागी नहीं होती। पुरुष जब घर आता है तो अपने व्यवसायिक सरोकारों ज्यादातर घर से बाहर छोड़कर आता है। स्त्री से सम्बन्ध की उसकी इक्वेशन भावनात्मक और पारिवारिक अधिक होती है, हालांकि इस बात की प्रशाखा यह भी है कि स्त्रियाँ पहले से इतनी इक्विप्ट होती तो रिश्ता पहले से बन चुका होता- बराबरी का रिश्ता। इससे फिर से मेरी ही बात सिद्ध होगी कि राइट्स रन पैरेलल टू इक्विपमेंट।'' तत्-सम की प्रेमकथा की दृष्टि में जो परिपक्वता है वह भी एक अनोखे रूप में पाठकों को प्रभावित करती है। कहीं पर भी स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का सस्तापन नहीं है, चाहे वसुधा का सम्पर्क विवेक से हो या फिर आनन्द से, उन सम्बन्धों में एक तरह की प्रौढ़ता अथवा गरिमा है। विवेक अपने अतीत के साथ ऐसा जकड़ चुका है कि वह अन्त में वसुधा के साथ विवाह बन्धन अस्वीकार कर देता है और वसुधा को एक

Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-12 No.03 December 2020

पत्र भेजकर अपनी स्थिति के विषय में बताता है कि किस तरह से वह स्मृतियों के जाल में उलझ कर एक नया रिश्ता बनाकर उसे धोखे में नहीं रख सकता है। विवेक से स्वयं को अलग कर लेने के बाद वसुधा अपने आप को बिल्कुल काटती नहीं है, उन सम्बन्धों के अतीत को एक स्वस्थ रिश्ता व दिशा देती है, विवेक को वसुधा के द्वारा भेजा गया अन्तिम पत्र इस बात का प्रमाण है।

विवेक के आत्मकेन्द्रित व्यक्तित्व की मान्यताओं को चरमराकर वह लखनऊ वापस आ जाती है जहाँ भाई द्वारा अखबार में दिये गए वैवाहिक विज्ञापनों के जवाब में आए पत्र उसकी प्रतिक्षा कर रहे हैं। जिन पर उम्मीदवारों के नाम भले ही अलग-अलग हो लेकिन लोग वही के वही। वह पाती है हर कोई अपने अभावों को भरना चाहता है। एक को अपने बच्चों के लिए माँ चाहिए थी तो कई लोगों को भारी वेतन वाली कमाऊ बीवी। स्वयं के साथ ऐसा नाप-तौल देख कर वह टूट जाती है। ‘‘लोग आते, उसे नापते तौलते, कोंचते, लहुलुहान करते और पुरुष प्रभु सहजता में फैसले का अधिकार अपने पास रखने का एलान करते हुए लौट जाते।’’ अन्त में वसुधा इन सब प्रस्तावों को अस्वीकार कर देती है।

विभाग द्वारा दक्षिण भारत की यात्रा के दौरान वह बिमार पड़ जाती है, जहाँ उसकी मुलाकात आनन्द कपूर के साथ होती है। दोनों में प्रेम प्रसंग पनपता है और प्रेम की उष्णता के दोबारा अनुभव के साथ पुनः लखनऊ वापसी होती है। विवेक के तीन पत्र प्रतीक्षा में हैं, जिसमें विवेक अपनी पलायनवादी प्रवृत्ति पर बहुत शर्मिंदा है कि उसने वसुधा से विवाह न करने की भूल की है। वह पत्र के माध्यम से दोबारा उससे शादी का प्रस्ताव रखता है और अपने किए पर क्षमा याचना करता है। वसुधा उन पत्रों को आनन्द के पास भेजती है। आनन्द वसुधा को निर्णय के लिए स्वतन्त्र छोड़ देता है। वह उस पर अपना निर्णय न थोपकर वसुधा को उसके स्वयं का निर्णय लेने के लिए छोड़ देता है और अन्त में वसुधा विवेक का प्रस्ताव अस्वीकार कर आनन्द से विवाह करने का फैसला लेती है।

तत्सम् एक अत्यन्त प्रभावशाली व परिपक्व रचना है। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में वह अपना विशिष्ट स्थान रखती है, अपने विषय के कुशल व गम्भीर निर्वाह के कारण उसे भूलाया नहीं जा सकता। बहराल राजी सेठ यहाँ केवल स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की बात नहीं कर रही हैं बल्कि इन रिश्तो की आढ़ में वह एक बड़े सच को अभिव्यक्त करती हैं और वह है विरोधी स्थितियों तथा नकारात्मक मनः स्थितियों के मध्य फस कर भी स्वयं को एक आशावादी दृष्टिकोण के साथ साबूत बाहर निकालना और जीवन में सम्पूर्ण आस्था को अनुभव करना। उपन्यास का आरम्भ तथा मध्य भले ही निराशात्मक तथा द्वन्द्व से भरा है, परन्तु उपन्यास का अन्त सुखात्मक व आनन्द से भरा है।

संदर्भ.....

1.**डॉ० संजीव महाजन, भारत में सामाजिक विघटन, पृ० 292**
2.**सम्पादक लक्ष्मी पाण्डेय, निकष पर तत्सम्, पृ० 194**
3. वही, पृ० 87
4. राजी सेठ, तत्-सम, पृ० 28
5. वही, पृ० 35
6.**वही पृ**.22
7.**सम्पादक लक्ष्मी पाण्डेय, निकष पर तत्सम, 89**
8. राजी सेठ, तत्-सम, पृ० 205
9.**वही पृ**.207
10.**सम्पादक लक्ष्मी पाण्डेय, निकष पर तत्सम्, पृ० 138**

Copyright @ 2020 Authors